कहानी की तलाश में अभिव्यक्त आम व्यक्ति का अंतर्द्वंद्व

विद्या छेत्री
शोधार्थी,सिक्किम विश्वविद्यालय

सारांश-
'कहानी की तलाश में' यह अलका सरावगी कृत कहानी संग्रह है,जिसमें कुल कहनियाँ हैं | इस संग्रह को लिखने का आधार उन्हें अपनी एक यात्रा के दौरान मिली,जहाँ आम व्यक्ति के जीवन के कई रूपों को देखने का उन्हें अवसर प्राप्त हुआ । अतः उनके जीवन को बहुत करीब से देखने का उन्हें जो अवसर मिला उसने उनके प्रति गहरी संवेदना जागने में मदद की जो उनके कथा साहित्य में साफ दिखाई देती है । उनकी कहानियाँ आम आदमी के जीवन की व्यथा कथा को बहुत बरीकी से खोलती हुई, जीवन के विविध डगर में हँसी, खुशी, संघर्ष और उससे उपजे मानसिक द्वंद्वों को पकड़ती हुई उनकी कहानियां चलती हैं । 'कहानी की तलाश में' संग्रह की कहानियाँ विषय के स्तर पर विविधता लिए हुए है,साथ ही नए भावभूमि और अनुभव का विस्तार भी । सभी कहानियाँ अपने समय के साथ सशक्त संवाद करती हुई आम व्यक्ति के जीवन के विविध फलक को स्पर्श करती है।

बीज शब्द-
आम व्यक्ति, अंतर्द्वंद्व, मानसिक संघर्ष, चेतन मन, नकारात्मक बोध, सामाजिक बिडम्बना, स्वतंत्रता, जीवन संघर्ष, महानगरीय जीवन बोध, विसंगतियाँ, पुरुषवादी मानसिकता इत्यादि |

वर्तमान साहित्य लेखन के परिदृश्य में एक महत्त्वपूर्ण नाम कोलकाता की अलका सरावगी का है, जिन्होंने नब्बे के दशक से लिखना शुरू किया और लगातार लिख रही हैं। अलका सरावगी ने स्त्रियों को अपनी रचनाओं में स्थान देने के साथ-साथ मानव जीवन के विविध पक्षों और समस्याओं को भी साहित्य का विषय बनाया है। उनकी कहानियों में आम आदमी का अकेलापन, आंतरिक द्वन्द्व, स्त्री पुरुष संबंध, रूढ़ि-परंपरा, आधुनिकता बोध, संयुक्त परिवारों का विघटन, पारिवारिक रिश्तों में खटास, अलगाव बोध, घुटन, दिखावापन, मूल्यहीनता, संवेदनहीनता, सांस्कृतिक मूल्यों का विघटन, स्त्री शोषण, मानव की अमानवीयता भूमंडलीकरण और बाजारवाद से उत्पन्न समस्याओं का जीवंत चित्रण किया है। उनके साहित्य का सबसे महत्त्वपूर्ण पक्ष आम आदमी का अंतर्द्वंद्व है, जो नई कहानियों के बाद लुप्तप्राय थी । उसे साहित्य में फिर से लाने का प्रयत्न अलका सरवगी द्वारा हुआ है।

मनुष्य के जीवन में स्वस्थ शरीर और स्वस्थ मन का महत्त्व रहता है। तन-मन के सामंजस्य से मनुष्य अपने बलबूते पर बहुत कुछ करने का सामर्थ्य रखता है। भावों और विचारों के सामंजस्य के अभाव में द्वंद्व की स्थिति बनती है जो मानसिक परेशानी देती है और किसी निर्णय की स्थिति तक पहुँचने में दिक्कतें करती हैं। 'हिन्दी कोश' के अनुसार, "वह स्थिति जब मन में ऐसे विचार उत्पन्न होते हैं, जिनमें परस्पर विरोध और संघर्ष होता है, उसे ही अंतर्द्वन्द्व कहते हैं।" यह एक प्रकार का मानसिक संघर्ष है, मनुष्य को केवल चेतन मन के संघर्ष का बोध होता है, अचेतन मन के भावों से वह अनभिज्ञ रहता है। अचेतन मन का अज्ञात संघर्ष बाहर न आ पाने के कारण मनुष्य से तरह-तरह के कर्म करवाता है। फ्रायड ने इस अज्ञात मन के संघर्ष का विश्लेषण अपने मनोविज्ञान में किया है।

वर्तमान दौर जटिल समय का दौर है, उस जटिलता ने मानव मन को और ज्यादा अंतर्द्वन्द्व की स्थिति में डाला है। 'अंतर्द्वन्द्व' सभी के मानस में घटने वाली घटना है परन्तु यह एक आम व्यक्ति की ज़िन्दगी को बहुत ज्यादा प्रभावित करता है। धूमिल के शब्दों में आम व्यक्ति उस भेड़ की तरह होता है जो दूसरों को ठंड से बचाने के लिए अपनी पीठ पर ऊन का बोझ ढोता है। समकालीन समय में मनुष्य जिस प्रकार आत्मकेंद्रित होता जा रहा है, उसी प्रकार साहित्य का क्षेत्र भी सीमित होता जा रहा है जिसमें व्यक्ति भले ही उसके केंद्र में है लेकिन आम व्यक्ति हाशिए पर जा रहा है। आम व्यक्ति की पीड़ा को स्वर देने के लिए रचनाकार को भी खास से आम होने की जरूरत होती है। अलका सरावगी का सामान्य जन-जीवन के प्रति गहरा सरोकार रहा है, "मुझे तो सिर्फ वे लोग सरल लगते हैं जो बेचारे दुनिया में मूर्ख समझे जाते हैं।" आज समाज की सारी स्थितियों ने मानव से उसकी अस्मिता छीन ली है। इसी छीने हुए अस्मिता को पाने और अपनी परिस्थितियों से टकराने की छटपटाहट अलका के कथा-साहित्य के पात्रों में दिखाई देती है। उनके कथा साहित्य का उदेश्य आम जन-जीवन के दैनंदिन में घटित होने वाली घटनाओं को उजागर करते हुए उनके मानसिक और कुंठित ग्रंथियों का विश्लेषण करना है, "दुनिया का सबसे बड़ा रहस्य है- मानव का मन और यही साहित्य के सृजन और पठन के आनंद का आधार भी है। मुझे लगने लगा है कि व्यष्टि और समष्टि के द्वंद्व को लेकर की जानेवाली तमाम बहसें बेकार हैं- बिना 'व्यष्टिवादी' हुए कोई भला समष्टि को क्या समझेगा? यदि एक व्यक्ति का आर्त्त अनुभव, उसका कष्ट, उसका पल-पल उद्वेलन, उसकी असहाय छटपटाहट- कुल मिलाकर उसकी साधारणता ही साहित्य में नहीं आती तो हम किस साधारण आदमी के साहित्य की बात करते हैं? आज की दुनिया में साहित्य के कुछ लोगों तक ही सिमटते जाने का कहीं यही कारण तो नहीं? कहीं विराट समस्याओं से जूझने की पात्रता की तलाश के चक्कर में हमनें साधारण लोगों की बड़ी जनसंख्या को साहित्य में पात्र बनने से निष्काषित तो नहीं कर दिया है? शायद हमें पूर्वाग्रहों से मुक्त होकर इस बात पर फिर से विचार करना चाहिए।" उनकी कहानियाँ व्यक्ति मन की जटिलता का बोध कराती हुई सामाजिक जीवन की संश्लिष्टता की ओर संकेत करती आगे बढ़ती हैं। वे उस आदमी को लेकर चिंतित दिखती हैं जो मशीनीकरण की इस दौड़ में मशीन का एक पुर्जा बनने को विवश है।

अलका सरावगी की कहानियों में उम्र के विविध पड़ाव के पात्रों में अंतर्द्वन्द्व दिखाई पड़ता है। कहानियों में लगभग सभी आम जीवन जीते हुए लोग हैं, जो अपने समय समाज के साथ ताल-मेल बिठाने के प्रयत्न में कई तरह के द्वंद्व झेल रहे हैं। मानव जीवन में सामान्य सहज मानवीय स्तर पर जो आत्मीयता होती है वह समाप्त होती चली गई है और औपचारिकता ने अपने पैर पसार लिए हैं। व्यक्ति अपने परिवार और कारोबार तक यूँ सिमटकर रह गया है कि वह किसी से बातचीत करने में अपने को सहज नहीं पाता है, "मैं बहुत दिन से सोच रहा हूँ कि उससे उसकी कोई कहानी पढ़ने के लिए माँग लूँ, पर कितनी दिक्कत होती है मुझे किसी नए आदमी से बात शुरू करने में और इस तरह की बातें, जो मैंने आज तक किसी से भी नहीं की हैं।" आम व्यक्ति का जीवन संघर्ष से परिपूर्ण होता है, अपने जीवन संघर्ष से भिड़ने और उसे नियति मानकर स्वीकार उसके अनुरूप चलने की गति में वह कुछ और कहाँ सोच और देख पाता है, ऐसे में उसका दुःख अव्यक्त उसके भीतर दफ़न रह जाता है। 'कहानी की तलाश में' कहानी का कथानायक रिटायर्ड व्यक्ति है। वह सोचता है कि उसने अपना जीवन ठीक जिया कि नहीं ? वह अतीत की खुशियों की तरफ लौटता दिखाई देता है। वर्तमान में न रहकर आप अपने बीते दिनों की अच्छी स्मृतियों में लौट रहे हैं तो स्पष्ट है आपका वर्तमान संतोषजनक नहीं है | वह समझ नहीं पाता है कि उसके अंदर कई तरह के द्वंद्व चल रहा है। आम व्यक्ति का जीवन अपनी छोटी-छोटी इच्छाओं की पूर्ति में निकल जाता है लेकिन अहसास उसे तब होता है जब बहुत कुछ निकल चुका होता है। फिर जीवन की नयी बनी स्थिति को स्वीकारने के बजाय अपना ध्यान कहीं और बंटाने की चेष्टा करता है। आज नौकरीपोश मध्यवर्गीय लोगों की लगभग यही स्थिति है। छोटी-छोटी खुशियों के लिए अपना जीवन वे खपा देते हैं और अंत में कई प्रकार के मानसिक रोग के शिकार होते हैं क्योंकि बहुत कुछ करने के बावजूद उनके हाथ खाली रह जाते हैं। 'महँगी किताब', 'उद्विग्नता का एक दिन' और 'प्रतीक्षा के बाद...' आदि कहानियों में भी व्यक्ति के अलकेपन के साथ-साथ उस मनोवृति को भी उभारा गया है जो अक्सर व्यक्ति में अकेला होने के कारण पनपता है, "शायद यह आम हिंदुस्तानी आदत ही है कि हम जब भी कहीं बैठे किसी का इंतज़ार करते होते हैं, तो हम आसपास के लोगों को बड़ी दिलचस्पी से देखते हैं और उनके बारे में कुछ उलटे-पुलटे निष्कर्ष निकालते रहते हैं।"

"शायद यह आम हिंदुस्तानी आदत ही है कि हम जब भी कहीं बैठे किसी का इंतज़ार करते होते हैं, तो हम आसपास के लोगों को बड़ी दिलचस्पी से देखते हैं और उनके बारे में कुछ उलटे-पुलटे निष्कर्ष निकालते रहते हैं।"

समकालीन समय में मनुष्य में हताशा, निराशा, क्रोध, इर्ष्या, प्रतिशोध लेने की प्रवृत्ति ऐसे ही अनेक नकारात्मक भाव दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। आज दिखावापन या एक दूसरे से आगे बढ़ने की होड़ में मनुष्य को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में मानसिक दवाब का सामना करना पड़ रहा है जिसके

कारण अक्सर लोग अपने को उसमें फिट नहीं कर पाते तो आत्महत्या उन्हें सहज और सरल रास्ता लगता है और उसका चुनाव उनका अंतिम निर्णय हो जाता है । 'मौत का एक दिन मुअय्यन है, नींद क्यों रात भर नहीं आती' कहानी के कथानायक की पत्नी बिना सोचे समझे आत्महत्या कर लेती है। आज व्यक्ति आत्मकेंद्रित होने के कारण दिन-ब-दिन अपने आप से ही उलझते चला जाता है और अंत में डिप्रेशन का शिकार हो जाता है। डिप्रेशन' आज बड़ों में ही नहीं बच्चों में भी आम समस्या के रूप में उभर कर सामने आ रही है। डिप्रेशन में आकर लोग गलत फैसले ले लेते हैं। 'टिफिन' कहानी की किशोरी विद्या भी घर छोड़ कर कहीं चली जाती है। 'बीज' कहानी की कथानायिका भी डिप्रेशन की शिकार है। उसके पति के लगातार प्रोत्साहन और इलाज का कोई असर नहीं होता है पर अचानक एक दिन महानगर की व्यस्तता को देखकर उसे लगता है जैसे कुछ भी नहीं थमा, सब अपनी गति में चली जा रही है पर वह क्यों थम गयी? मानसिक रोग के शिकार व्यक्ति का आत्मविश्वास से बड़ा कोई इलाज नहीं होता। ऐसी विषम परिस्थिति में अलका की कहानियाँ जीवन के प्रति आस्था जागाती है। 'हर शै बदलती है' कहानी जीवन के प्रति आस्था को शब्द देने के प्रयास में लिखा गया है। आलोच्य कहानी की कथानायिका के मन में कई तरह के द्वंद्व की स्थिति उत्पन्न होती रहती है लेकिन कहीं न कहीं जीवन जीने की लालसा है जो उसे कमजोर पड़ने नहीं देती।

अलका सरावगी की पत्र लेखन शैली में लिखी गई 'मिसेज डिसूजा के नाम' कहानी में एक अकेली माँ के मन में चल रहे द्वन्द्व का बखूबी चित्रण हुआ है। उसके अंदर का द्वंद्व सामाजिक विडम्बना की देन है। एक स्त्री अकेले सबकुछ करने में समर्थ होते हुए भी समाज कैसे उस पर ऊँगली उठाता है, जीवन का दबाव किस तरह आम व्यक्ति की सोच और मानसिकता का निर्माण करता है इस कहानी से बखूबी समझा जा सकता है "आप बताइए, मिसेज डिसूजा, जरूरी और गैरजरूरी में कैसे फर्क होता है? मुझे तो कुछ समझ में नहीं आता।" उसे जितना जरूरी अपने माँ के कर्तव्य को निभाना लगता है उतना ही जरूरी उसके लिए उसका संगीत भी है। उसके मन में उपस्थित द्वन्द्व के कारण उसकी कथनी और करनी में भी फर्क देखने को मिलता है। वह स्वयं अपने कर्तव्यों के प्रति जागरूक नहीं है लेकिन वह दूसरों को कर्तव्य के प्रति निष्ठावान होने की उम्मीद करती है। आलोच्य कहानी समाज द्वारा बनाये स्त्री पुरुष के मध्य के दोहरे मानदंड का विरोध करती है। जिस समाज में पुरुष की स्वतन्त्रता को मान्य और स्त्री की स्वतन्त्रता को निरंकुशता का नाम दिया जाता है। अगर दोनों एक दूसरे के पूरक हैं तो दोनों को समान अधिकार मिलना चाहिए। 'बहुत दूर है आसमान' कहानी में भी एक छोटी सी बच्ची गुल्लू के अभिभावकों के मन में अपनी बच्ची की स्वतन्त्रता और सुरक्षा में किसी एक के चुनाव को लेकर द्वंद्व की स्थिति उत्पन्न होती है, "हम यही चाहते हैं न गुल्लू आजाद पक्षी की तरह उड़े, पर यह भी तो चाहते हैं न कि उसके साथ कोई दुर्घटना न हो। हमें सावधान तो रहना ही होगा। इसके सिवाय और हम क्या कर सकते हैं?" आम आदमी का जीवन कुछ ऐसा ही होता है, जीवन के निर्णय में अक्सर द्वंद्व की स्थिति से उसे गुजरना पड़ता है। ऐसी स्थिति में उस विचार को वरीयता देनी पड़ती है जो अधिक जरूरी है और बेटी की सुरक्षा ज्यादा वजन पा जाती है।

'एक व्रत की कथा' कहानी के माध्यम से भी अलका सरावगी ने प्राचीनता और आधुनिकता के बीच के अंतर्द्वन्द्व को बखूबी उजागर किया है। वर्तमान समय में एक साथ दो-तीन पीढ़ियाँ रहती हैं पर वे आपस में एक-दूसरे के साथ सामंजस्य स्थापित नहीं कर पाते हैं, उनके मध्य उनकी वैचारिकता में अंतर होता है। जिसके कारण उसमें द्वंद्व की स्थिति उत्पन्न होती है। कथानायिका अंधविश्वासों और जड़ मान्यताओं का विरोध करते हुए भी उसे पूरी तरह नकार नहीं पाती है, "सचमुच किसी को कुछ हो गया तो?" आज ऐसे न जाने कितने ही लोग अपने विचारों के द्वंद्व में पड़ कर निर्णय न ले पाने की स्थिति में आते हैं और अंत में सबके बीच अकेले रहने को विवश होते हैं। 'खिजाब' कहानी की दमयंती जहाँ अपने लिए स्वतन्त्रता का चुनाव करती है वहीं अपने बच्चों को अभिव्यक्ति की भी स्वतन्त्रता नहीं देती, "बात सीधी-सी है– यदि स्वतन्त्रता और प्रेम हमारे लिए सचमुच मूल्य हैं, तो हमारी कोशिश होगी कि दूसरों को भी हम इन्हें दें, पर होता अक्सर ऐसा है कि हमारे लिए ये मूल्य नहीं होते, बल्कि सिर्फ अपने लिए बटोरी गई सुविधा मात्र होते हैं। 'ख़िज़ाब' की दमयंती जी सम्बन्धों की सुरक्षा को त्याग कर स्वतन्त्रता का चुनाव करती हैं, पर यही स्वतन्त्रता वे अपनी बेटी तक को नहीं दे पातीं। दरअसल यह एक आत्मकेंद्रित व्यक्ति की स्वतन्त्रता है। यही सलूक 'संभ्रम' की कनक मौसी 'प्रेम' शब्द के साथ करती हैं।" आज व्यक्ति अपने लिए सबकुछ पाना चाहता है लेकिन दूसरों की खुशियाँ उसके लिए कोई मायने नहीं रखता। अपनी कहानियों में अलका ने 'प्रेम' और 'स्वतन्त्रता' को वरीयता दी है लेकिन उनका मानना है कि एक स्त्री की स्वतन्त्रता पुरुष से अलग होकर नहीं बल्कि उसकी सहचारिणी बनकर उसके साथ कदम से कदम मिलाकर चलने में है। 'लाल मिट्टी की सड़क' कहानी नारी-जीवन की पीड़ा और द्वंद्व के प्रतीक रूप में हमारे समक्ष आती है इसके साथ-साथ स्त्री मन के कई अनसुलझे प्रश्न खड़े करती है। लाल मिट्टी की विशेषता के अनुरूप वंदना भी पुरुषवादी मानसिकता के ताप और दवाब में पली-बड़ी हैं जिसके कारण वह भी रंध्र युक्त है। उसकी सोच और उसकी समझ दोनों भिन्न है। वह अपने वैवाहिक जीवन में पूर्णतया स्वतंत्र होते हुए भी उस स्वतन्त्रता को सहजता से स्वीकार नहीं कर पाती है, "तो क्या सचमुच मेरा सारा सोचना विचारणा एक औरत होने से ही जुड़ा है? क्या एक व्यक्ति के रूप में मेरी कोई सत्ता नहीं है? जिस अहसास

को वह वर्षों से जीवन के अर्थ की एक गहरी खोज के रूप में देखती आई थी, वह क्या सिर्फ एक कमजोरी भर है? एक सहारे की जरूरत क्योंकि वह दुर्बल है? उसे अपने एक दुर्बल अस्तित्त्व यानी एक औरत होने का अर्थ समझ में आने लगा और साथ ही दिमाग में यह प्रश्न भी– यदि मैं लड़का होती तो?" वह अपने जीवन के कटु स्थितियों से प्राप्त अनुभवों से अपना सम्बन्ध नहीं तोड़ पाती है। अतः शारीरिक रूप से वह भले ही स्वतंत्र है लेकिन मानसिक रूप से पुरुषवादी मानसिकता की गुलाम बनी रह जाती है उससे अपने को मुक्त नहीं कर पाती।

अलका सरावगी की कहानियाँ समकालीन समय में आम व्यक्ति के द्वंद्व, उसके मानसिक संघर्ष को पकड़ने की चेष्टा है और उसके कारणों की पड़ताल भी। उन्होंने अपनी कहानियों में महानगरीय जीवन बोध की विसंगतियों को बारीकी से उजागर किया है। दिखावेपन की अंधी दौड़ में पड़कर आज व्यक्ति कैसे कृत्रिम व्यवहार के आदी हो चुके हैं इसको दिखाने का प्रयत्न हुआ है । कहानी की तलाश में की सभी कहानियों में आम जीवन और उनके द्वंद्व का चित्रण है जो तत्कालीन समय के साथ आम जीवन की संघर्षपूर्ण जीवन स्थितियों की उपज है | जिसको झेलने के लिए वे अभिशप्त हैं | उन्होंने अपनी कहानियों में केवल आम व्यक्ति के अंतर्द्वन्द्व को ही वाणी नहीं दी हैं वरन अपने समय के परिवेश में बनते बिगड़ते हालातों में व्यक्ति किस तरह अपनी उपस्थिति दर्ज करता है और उसमें कैसे-कैसे मानसिक द्वंद्वों से जूझता है उसकी जीवंत अभिव्यक्ति भी की है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. सरावगी, अलका(2019) कहानी की तलाश में. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन
2. त्रिवेदी, डॉ. प्रीति (2014) नारी विमर्श और अलका सरावगी का कथा साहित्य. कानपुर : अतुल प्रकाशन
3. दुबे, डॉ. शीतला प्रसाद और चौबे, सत्य सुधीर (2013) अलका सरावगी का कहानी साहित्य. कानपुर: अतुल प्रकाशन
4. देवी, डॉ. मोनिका (2018) अंतिम दशक की कहानियों में वैचारिक संघर्ष. कानपुर: विद्या प्रकाशन
5. धूमिल(2018) संसद से सड़क तक. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन
6. वर्मा, आचार्य रामचंद्र(संपा.) (2009) प्रामाणिक हिंदी कोष. इलहाबाद: लोकभारती

हिन्दी

हिन्दी भाषा का इतिहास लगभग एक हज़ार वर्ष पुराना माना गया है। हिन्दी भाषा व साहित्य के जानकार अपभ्रंश की अंतिम अवस्था 'अवहट्ठ' से हिन्दी का उद्भव स्वीकार करते हैं। चंद्रधर शर्मा गुलेरी ने इसी अवहट्ठ को 'पुरानी हिन्दी' नाम दिया।

अपभ्रंश की समाप्ति और आधुनिक भारतीय भाषाओं के जन्मकाल के समय को संक्रांतिकाल कहा जा सकता है। हिन्दी का स्वरूप शौरसेनी और अर्धमागधी अपभ्रंशों से विकसित हुआ है। १००० ई. के आसपास इसकी स्वतंत्र सत्ता का परिचय मिलने लगा था, जब अपभ्रंश भाषाएँ साहित्यिक संदर्भों में प्रयोग में आ रही थीं। यही भाषाएँ बाद में विकसित होकर आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं के रूप में अभिहित हुईं। अपभ्रंश का जो भी कथ्य रूप था - वही आधुनिक बोलियों में विकसित हुआ।

अपभ्रंश के सम्बंध में 'देशी' शब्द की भी बहुधा चर्चा की जाती है। वास्तव में 'देशी' से देशी शब्द एवं देशी भाषा दोनों का बोध होता है। प्रश्न यह कि देशीय शब्द किस भाषा के थे ? भरत मुनि ने नाट्यशास्त्र में उन शब्दों को 'देशी' कहा है 'जो संस्कृत के तत्सम एवं सद्भव रूपों से भिन्न है। ये 'देशी' शब्द जनभाषा के प्रचलित शब्द थे, जो स्वभावत: अप्रभंश में भी चले आए थे। जनभाषा व्याकरण के नियमों का अनुसरण नहीं करती, परंतु व्याकरण को जनभाषा की प्रवृत्तियों का विश्लेषण करना पड़ता है, प्राकृत-व्याकरणों ने संस्कृत के ढाँचे पर व्याकरण लिखे और संस्कृत को ही प्राकृत आदि की प्रकृति माना। अतः जो शब्द उनके नियमों की पकड़ में न आ सके, उनको देशी संज्ञा दी गई।